THE ECONOMIC TIMES

Date:29-06-23

Making Private Sector Climate Talk Walk

ET Editorials

Norms for disclosure on how climate change impacts companiesissued by the G20-backed International Sustainability Standards Board (ISSB) on Monday is an important step to stem 'greenwashing'. Given the rising number of pledges and commitments to reduce carbon footprint and achieve net-zero over the last few years, this will be a measure of whether walk matches talk. This comprehensive global baseline for sustainability and climate-related disclosures will provide clarity to investors on sustainability and risks and opportunities of companies.

ISSB was set up in response to market and investor demand at COP26 in Glasgow to devise a way to compare claims made by companies under various voluntary sustainability standards developed over time. A robust global benchmark was among the recommendations of the UN secretary-general's High-Level Expert Group on the Net-Zero Emissions Commitments of Non-State Entities.

Companies, too, will benefit from a single global standard, as it reduces the requirement and associated costs and complexities of meeting the fragmented landscape of voluntary standards. Countries are not required to adopt these standards nationally. The US, for instance, is expected to have light-touch regulations, while the EU would have higher requirements. Even so, a global standard will simplify compliance, and allow investors to make better decisions. The Securities and Exchange Board of India (Sebi) could consider making its Business Responsibility and Sustainability Report (BRSR) in line with the global benchmarks. ISSB norms have also addressed the issue of interoperability. Clarity and comparability of sustainability claims made by the private sector will improve the capacity to attract investment.

दैनिक भास्कर

Date:29-06-23

बौद्धिक संपदा से ही आगे दशकों का भविष्य तय होगा

संपादकीय

एआई का दौर है। पूरी दुनिया में जीडीपी बढ़ाने का तरीका बदल रहा है। दिमाग के प्रयोग से दुनिया, कृषि से विनिर्माण के रास्ते सेवा क्षेत्र तक यानी स्थूल उत्पादन से आज एक अदृश्य (इंटेंजिबल) उत्पादन की ओर बढ़ रही है। वैश्विक जीडीपी में सेवा क्षेत्र का योगदान 52% है, जबकि विकसित देशों में औसत 76% अमेरिकी जीडीपी में सेवा क्षेत्र का

योगदान आज 80% है। वैश्वीकरण के वर्तमान दौर में किसी देश के विकास की दशा और दिशा इस बात से पता चलती है कि उसकी प्रति 100 अरब डॉलर जीडीपी पर बौद्धिक सम्पदा अधिकार के तहत पेटेंट्स अधिकार के कितने आवेदन किए गए हैं। भारत इस पैमाने पर सन् 2021 में 25वें स्थान पर था, जबकि दक्षिण कोरिया, चीन और जापान क्रमशः सबसे ऊपर थे। ऐसा नहीं है कि देश में प्रतिभा नहीं है। मल्टी-नेशनल्स में भारतीय युवाओं की भरमार है लेकिन उनके शोध का श्रेय कंपनियों को जाता है क्योंकि रिसर्च पर खर्च उनका होता है। उधर हमारा अतिरिक्त कृषि उत्पाद भी सही तकनीकी के अभाव में महंगा होने के कारण विश्व बाजार में महंगा होता है। आज भारत में शोध पर जीडीपी का मात्र 0.5-0.7% खर्च होता है, जिसमें निजी क्षेत्र का योगदान बेहद कम 0.2-0.3% ही है। बौद्धिक संपदा से ही अगले कई दशकों का भविष्य तय होगा ।

Date:29-06-23

देश की अंदरूनी सुरक्षा के लिए मणिपुर बड़ी चुनौती

राजदीप सरदेसाई, (वरिष्ठ पत्रकार)

पत्रकार होइन्हु हाउजेल और उनका परिवार 3 जून 2023 को कभी भुला न सकेंगे। उस रात इम्फाल स्थित उनकी रिहायशी कॉलोनी में एक सशस्त्र समूह घुसा और 30 से ज्यादा घरों को जला दिया। वे सभी कुकी-जोमी समुदायों के घर थे। होइन्हु के बुजुर्ग माता-पिता को वहां से भागना पड़ा। उनके जले हुए घर के मलबे में कई बेशकीमती किताबें थीं, क्योंकि होइन्हु के पिता एक अकादमिक विद्वान हैं और उन्होंने मणिपुर की जनजातियों के बारे में विस्तार से लेखन किया है। उनकी कॉलोनी में केवल जनजाति समूहों के घरों और गिरजाघरों को निशाना बनाया गया था, जबकि पड़ोस में मौजूद मैतेई लोगों के घरों को छुआ तक नहीं गया। ये इस बात का सबूत है कि आज मणिपुर नस्ली हिंसा के किस दुष्चक्र में प्रवेश कर चुका है। बीते दो माह में राज्य में 120 से ज्यादा लोगों की जान जा चुकी है और हजारों को बेघर होना पड़ा है। होइन्हु के साथ हुई घटना इसलिए भी भयावह है, क्योंकि इम्फाल में उनका घर मुख्यमंत्री-निवास से दस मिनट की दूरी पर है।

देश में लक्षित-हिंसा की घटनाएं नई नहीं। दिल्ली 1984, मुम्बई 1992-93, गुजरात 2002, मुजफ्फरनगर 2012 : सूची लम्बी है। इसी में अब मणिपुर 2023 का नाम भी जुड़ जाएगा। अंतर इतना ही है कि जहां इस सूची में शामिल अन्य घटनाओं ने देश की 'सामूहिक-चेतना' को झकझोरा था, वहीं मणिपुर को लेकर लगभग उदासीनता है। इसका कारण पूर्वोत्तर का राष्ट्रीय मुख्यधारा से अलग-थलग होना तो है ही, इसके लिए समाचार-जगत की कठोर सच्चाइयां भी जिम्मेदार हैं।

मई की शुरुआत में मणिपुर में हिंसा की घटनाएं तब शुरू हुई थीं, जब अदालत के एक अविवेकपूर्ण आदेश के चलते मैतेइयों को अनुसूचित जनजाति का दर्जा देने की बात कही गई थी। उस समय देश का राजनीतिक-वर्ग कर्नाटक चुनावों

में मसरूफ था। प्रधानमंत्री और गृहमंत्री के साथ ही कांग्रेस के नेतागण भी कर्नाटक का दौरा कर रहे थे। कर्नाटक संसाधनों से भरपूर राज्य है, जो लोकसभा में 28 सांसद भेजता है, इसकी तुलना में महज दो लोकसभा सीटों वाले दीन-दुखियारे मणिपुर की क्या बिसात? हिंसा भड़कने के चार सप्ताह बाद 29 मई को गृहमंत्री अमित शाह मणिपुर पहुंचे और वहां तीन दिन रहे। लेकिन उनकी यात्रा के बाद भी हिंसा की घटनाएं होती रहीं, जिनमें निर्वाचित जनप्रतिनिधियों के भी घर फूंक दिए गए। इससे हम अनुमान लगा सकते हैं कि शाह की यात्रा बहुत देरी से हुई थी और बहुत कम प्रभाव डाल सकी थी।

इससे भी अधिक विचलित करने वाली है मुख्यमंत्री एन. बीरेन सिंह की भूमिका, जो न केवल इस मामले में असहाय मालूम हुए हैं, बल्कि वे कई बार पक्षपातपूर्ण रवैया अपनाते भी नजर आए हैं। व्यथित नागरिकों को आश्वासन देने के बजाय उन्होंने उलटे यह कहकर मैतेइयों को भड़का दिया कि हिंसा के लिए कुकी उग्रवादी जिम्मेदार हैं। 28 मई को हुई एक प्रेसवार्ता में बीरेन सिंह ने यह भी कहा कि म्यांमार से आए अवैध प्रवासी और आदिवासियों के इलाकों में उत्पन्न होने वाली अफीम से अर्जित आमदनी इस हिंसा को उकसा रही है। लेकिन उन्होंने बहुत चतुराईपूर्वक मैतेई उग्रवादी समूहों की हिंसक वारदातों को नजरअंदाज कर दिया। इतिहास बताता है कि इस तरह के हिंसक संघर्षों में सत्तापक्ष की निष्क्रियता या उदासीनता आग में घी डालने का काम करती है। मणिपुर में तो ये हाल है कि राज्य की पुलिस भी नस्ली आधार पर विभाजित मालूम होती है। ऐसे में पूछा जा सकता है कि वह कानून-व्यवस्था कायम करने की अपनी जिम्मेदारी कैसे निभा सकेगी? पुलिस मुख्यालय के एक अधिकृत आकलन के मुताबिक इम्फाल घाटी के राज्य शस्त्रागारों और पुलिस स्टेशनों से कम से कम 3500 बंदूकें और 5 लाख गोलियां 'चोरी' हो गई हैं। देश के किसी भी अन्य हिस्से में इस तरह की हथियारों की लूट को राजद्रोह समझा जाता और इसके लिए अगर राज्य सरकार को बर्खास्त नहीं किया जाता तो कम से कम जिम्मेदारों पर सख्त कार्रवाई जरूर की जाती। आज सरकार के सोशल मीडिया चीयरलीडरों द्वारा मणिपुर की घटनाओं को मैतेई हिंदू बहुसंख्यकों और आदिवासी ईसाई अल्पसंख्यकों के टकराव की तरह प्रदर्शित किया जा रहा है। यह अमित शाह के लिए अब तक की सबसे बड़ी अंदरूनी चुनौती है। 'मणिपुर की बात' करने का समय अब आ गया है।

पुनश्च : एन. बीरेन सिंह राष्ट्रीय स्तर के फुटबॉलर रह चुके हैं और वे 1981 में डुरैंड कप जीतने वाली टीम बोर्डर सिक्योरिटी फोर्स का हिस्सा भी थे। फुटबॉल में जब कोई खिलाड़ी फॉउल-प्ले करता है तो उसे रेड कार्ड दिखाकर बाहर कर दिया जाता है। क्या राजनीति में भी उन्हें रेड कार्ड दिखाया जाएगा? बीते साल बीरेन सिंह की सरकार मणिपुर में भारी बहुमत से दोबारा चुनी गई थी और उनका दावा था कि उन्होंने इस अशांत राज्य में शांति की स्थापना की है। ऐसे में क्या अब मुख्यमंत्री वहां हो रही घटनाओं की जिम्मेदारी से बच सकते हैं?

बिज़नेस स्टैंडर्ड

Date:29-06-23

आर्थिक परिवर्तन और गरीब-अमीर देश

रथिन रॉयरथिन रॉय, (लेखक ओडीआई, लंदन के प्रबंध निदेशक हैं)

आर्थिक परिवर्तन के लिए वित्तीय संसाधन मुहैया कराने की समकालीन समस्या का हल बहुत आसान है। विकसित देशों की उम्रदराज होती आबादी को उन गरीब देशों में निवेश करना चाहिए जहां युवा श्रम शक्ति मौजूद है जो उनकी पूंजी पर अधिक प्रतिफल दिला सकती है। अगर बाजार काम करें तो वित्तीय मदद अमीर देशों से गरीब देशों की ओर आनी चाहिए।

परंतु ऐसा नहीं हुआ। अमीर देश गरीब इलाकों को कारोबारी लिहाज से जोखिम भरा मानते हैं। यही वजह है कि अंतरराष्ट्रीय वित्तीय ढांचा ऐसे पूंजी प्रवाह पर 'क्षेत्र' और 'देश' की सीमाएं लागू करता है। किसी देश की प्रति व्यक्ति आय उसकी जोखिम रेटिंग में सबसे अधिक मायने रखती है। यानी कोई देश जितना अधिक गरीब होता है, उतना ही कम पैसा उसे मिलता है। परियोजना के स्तर पर वृहद आर्थिकी और संस्थागत स्तर पर जोखिम विकासशील देशों में किए जाने वाले निवेश पर उच्च जोखिम प्रीमियम तैयार करते हैं।

इसका प्रभावी तौर पर अर्थ यह हुआ कि किसी अमीर देश में क्रियान्वित होने वाली किसी भी परियोजना को गरीब देश में चलने वाली वैसी ही परियोजना की तुलना में काफी रियायती दर पर ऋण प्राप्त होता है। यह सही नतीजा नहीं है लेकिन अमीर देश बीते 50 वर्षों से इसी से संतुष्ट हैं। जोखिम के इस गलत मूल्यांकन का नकारात्मक प्रभाव विकासशील देशों को महसूस करना पड़ा।

बहरहाल, अब इस गलत आकलन का असर अमीर देशों के बच्चों की बेहतरी पर नजर आ रहा है। जलवायु परिवर्तन के प्रभाव को कम करने के लिए गरीब देशों को बहुत बड़े पैमाने पर वित्तीय मदद मुहैया कराने की आवश्यकता है। परंतु जिस ढांचे ने विकासशील देशों को वित्तीय मदद के प्रवाह का दम घोंटा वही अब जलवायु परिवर्तन संबंधी निवेश को गति देने में बाधा का काम कर रही है।

वित्तीय सहायता को लेकर शिखर बैठकें आयोजित हो रही हैं लेकिन वैश्विक नेताओं के लुभावने वक्तव्यों को हटा दिया जाए तो जोखिम के गलत मूल्यांकन के बुनियादी सवाल से निपटने की कोई कोशिश नहीं की जा रही है। मैं लंबे समय से इस बात का हिमायती रहा हूं कि जोखिम में ऐसी कमी को लेकर बाधाओं के खिलाफ कदम उठाए जाएं। भारत इस मायने में खुशकिस्मत है कि हमारी संप्रभु उधारी प्राय: भारतीय रुपये में है। विदेशी भारत का सरकारी ऋण रुपये में खरीद सकते हैं। उन्हें इसे रुपये में ही चुकाना होता है और वे उसे उस समय की विनिमय दर के आधार पर डॉलर में बदल सकते हैं। इसका इकलौता अपवाद बहुपक्षीय विकास बैंक हैं। विश्व बैंक इसका एक उदाहरण है।

दुर्भाग्य की बात है कि अधिकांश विकासशील देशों को ऐसी सुविधा उपलब्ध नहीं है। उनकी उधारी का 8 फीसदी हिस्सा विदेशी मुद्रा में होता है। इसका अर्थ यह हुआ कि जब उनकी मुद्रा का अवमूल्यन होता है तब ऋण की लागत बढ़ जाती है। ऐसा कई बाहरी कारणों से हो सकता है। यही मुद्रा का जोखिम है। इसका राजकोषीय अदूरदर्शिता या खराब आर्थिक प्रबंधन से कोई लेनादेना नहीं है। जबकि देनदारी में चूक की लगभग सभी स्थितियों में ऐसा ही हुआ। अविनाश प्रसाद दिखाते हैं कि ऐसे जोखिम को लेकर निरंतर जरूरत से बढ़चढ़कर आकलन किया जा रहा है।

इस समस्या के कई प्रस्तावित हल हैं। सोनी कपूर एक बहुपक्षीय फंड की बात करती हैं जो कम लागत वाला हेजिंग समर्थन मुहैया कराए। टीसीएक्स एक ऐसी पहल है जो जोखिम को कम करके स्थानीय मुद्रा में जारी ऋण की हेजिंग को अधिक व्यावहारिक बनाती है। प्रसाद इससे मिलता जुलता प्रस्ताव रखते हैं। वह चाहते हैं कि बहुपक्षीय विकास बैंक ऐसा करने के लिए एक एजेंसी स्थापित करें। हां, फर्क बस यह है कि ये उत्सर्जन का जोखिम कम करने के लिए जलवायु के अनुकूल परियोजनाओं का चयन करेगी।

ये प्रस्ताव सराहनीय हैं लेकिन शक्ति संतुलन के मामले में ये भी विकासशील देशों को अधीनस्थ समझना जारी रखते हैं। इन मामलों में भी अमीर देशों की ओर से जोखिम की बढ़ी हुई चाह की आवश्यकता नहीं होती है। संभावना इस बात की रहती है कि विकासशील देशों को इसकी पेशकश जलवायु परिवर्तन को सीमित रखने की शर्त पर की जाएगी। इसके लिए जरूरी है कि पश्चिम के देश विकासशील देशों में तेजी से निवेश करें। वे वृहद आर्थिक जोखिम पर हेजिंग के जरिये नियंत्रण करेंगे लेकिन जोखिम के गलत मूल्यांकन की समस्या को हल नहीं करेंगे जो कि मूल दिक्कत है।

उभरती अर्थव्यवस्था वाले देश इस मुद्दे को हल करने के लिए काफी कुछ कर सकते हैं। जबकि अब तक वे बस चुपचाप खड़े देखते रहे हैं। भारत और इंडोनेशिया की जी 20 की अध्यक्षता में ऐसे सवालों पर जरा भी ध्यान नहीं दिया गया: बहुपक्षीय विकास बैंकों को मुद्रा का पूरा जोखिम विकासशील देशों पर क्यों थोपना चाहिए? क्या यह उनकी मुद्रा का बेहतर उपयोग नहीं होगा कि परियोजनाएं तैयार करने और विदेशी मुद्रा में सुशासन और संस्थागत सुधार संबंधी ऋण के बजाय मुद्रा के जोखिम का बोझ लिया जाए? हम इस डिफॉल्ट प्रतिक्रिया को क्यों स्वीकार करें कि इससे उनकी एएए रेटिंग प्रभावित होगी। स्थानीय मुद्रा में ऋण देने से काफी मात्रा में पूंजी उपलब्ध होगी।

जी 20 की उभरती अर्थव्यवस्थाएं भी अपनी तरह से काफी कुछ कर सकती हैं। जब श्रीलंका कर्ज संकट से जूझ रहा था, मैंने दलील दी थी कि भारत को उसका कर्ज रुपये में अधिग्रहीत कर लेना चाहिए और श्रीलंका का भविष्य का कर्ज रुपये में होना चाहिए। यह देखना अच्छा रहा कि कुछ हद तक ऐसा हुआ है। अफ्रीकी देश अपने मौद्रिक संगठनों का इस्तेमाल करके स्थानीय मुद्रा में ऋण जारी कर सकते हैं। मैक्सिको और ब्राजील दक्षिण अमेरिका में ऐसा ही कर सकते हैं। अगर इस प्रस्ताव को सार्वभौमिक बनाया गया तो उभरते देशों की अर्थव्यवस्थाओं को भी अपने वृहद आर्थिक प्रबंधन की जिम्मेदारी लेनी होगी।

वृहद आर्थिक स्थिरता सुनिश्चित करने के लिए स्थानीय मुद्रा में ऋण अहम है। ऐसा करने से जोखिम में और कमी की जा सकती है। भारत इसका सशक्त उदाहरण है। आकार की समस्या हल की जा सकती है और कई तरह के हलों की अपेक्षा की जा सकती है। लेकिन तब अमीर देशों को 'हमारे साझा ग्रह' के बचाव में सत्ता सौंपनी होगी। गरीबी, स्वास्थ्य, शिक्षा और समृद्धि आदि ने उन्हें ऐसा करने के लिए पर्याप्त प्रेरणा नहीं दी। हमें देखना होगा कि क्या जलवायु परिवर्तन से बचने की बात अमीर देशों को इस बात के लिए प्रेरित करती है कि वे अपने बच्चों के हित में काम करें।